संपादकीय

शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है जो किसी भी देश की समाजाजिक प्रक्रियाओं, सांस्कृतिक संदर्भों और मूल्यों से प्रभावित होती है और उन्हें प्रभावित भी करती है। समय-समय पर इन संदर्भों में परिवर्तन के सापेक्ष शैक्षिक प्रक्रिया में परिवर्तन होते रहते हैं।

भारत एक विविधता प्रधान देश है। इसके समाज में बहुत सी भिन्नताएं हैं। प्राचीन काल से ही भारतीय समाज में मानवीय मूल्यों को प्राथमिकता दी जाती रही है और इन मानवीय मूल्यों के विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सामाजिक-आर्थिक व तकनीकी परिवर्तनों के कारण धीरे-धीरे मानवीय मूल्यों का ह्रास हो रहा है। यद्यपि शैक्षिक व्यवस्था में सदैव मूल्यों के विकास पर जोर दिया जाता रहा है, तथापि वैश्वीकरण, पाश्चात्यीकरण और आधुनिकीकरण के परिप्रेक्ष्य को न समझ पाने की स्थिति में इन प्रक्रियाओं को हमारे समाज पर हावी होने दिया जा रहा है, जिससे मूल्यों के ह्रास की स्थिति गंभीर होती जा रही है।

भारतीय आधुनिक शिक्षा के इस अंक में मूल्य शिक्षा से संबंधित तीन लेख शामिल हैं। अमित दवे और पूनम दवे का लेख मूल्य शिक्षा की आवश्यकता को दोहराते हुए ऐसी शिक्षा पर जोर देता है जो बच्चे का चारित्रिक विकास करे, उसे जीवन संग्राम के उपयुक्त बनाए, उसमें सच्ची जिज्ञासा जगाए और उसे मानसिक रूप से स्वतंत्र रहाना सिखाए। जितेन्द्र लोढ़ा का लेख शांति, विकास और शिक्षा के पारस्परिक संबंध का खुलासा करते हुए सुझाव देता है कि शांति व विकासयुक्त शिक्षा आज समय की मांग है जिसका उद्देश्य शांत, सुखी व समृद्ध मानवता का विकास करना है। हेमलता यादव ने अपने लेख में स्कूली पाठ्यक्रम में इतिहास विषय के माध्यम से बच्चे में शांति, अहिंसा, सद्भावना, समानता आदि मूल्यों के विकास करने की सिफारिश की है ताकि शांतिपूर्ण परिवेश बनाने में मदद मिल सके।

आज हमारे सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने का कानूनी अधिकार प्राप्त है परंतु यह तभी सम्भव है जब विद्यालय और शिक्षक इसके लिए हर संभव प्रयास करें और उपयुक्त वातावरण बनाएं। दीप्ति श्रीवास्तव का शोधपरक लेख शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 के अंतर्गत कमजोर पृष्ठभूमि के 25 प्रतिशत बच्चों को गैर सरकारी विद्यालयों में दाखिला देने की व्यवस्था की पड़ताल करता है और दर्शाता है कि किस प्रकार ये बच्चे इन विद्यालयों में बने रहने के लिए और सीखने के लिए नित् संघर्ष करते हैं। केवलानन्द काण्डपाल का लेख एक क्रियात्मक शोध पर आधारित है जो उत्तराखण्ड के कुछ प्राथमिक विद्यालयों में कक्षा में समावेशी वातावरण सृजित करने के लिए किया गया।

वर्तमान समय में ऐसी शिक्षा प्रणाली को प्राथमिकता दी गई है जिसमें बच्चों में मौलिक चिन्तन और सृजनात्मक क्षमता का विकास हो और वे ज्ञान की रचना कर सकें। ललित कुमार का शोधपरक लेख बताता है कि छात्र और छात्राओं की सृजनात्मकता में कोई अंतर नहीं है और विज्ञान के विद्यार्थी कला के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक क्रियाशील पाए गए, ऐसा क्यों है, मनन का विषय है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षा को रोजगार से जोड़कर देखा जाता है। अधिकांश माता-पिता अपने बच्चों को विद्यालय में दाखिल कराते ही उसके लिए एक अच्छे व्यवसाय के सपने संजोने लगते हैं। आज के विद्यार्थी अपने करियर के प्रति वास्तविक रूप से कितने सजग हैं? विभिन्न छात्रों का रुझान किन-किन व्यवसायों के प्रति अधिक है, क्या वे विषयों का चयन करियर को ध्यान में रखकर करते हैं आदि सवालों का जवाब खोजा है अनिता जोशी और सपना जोशी ने अपने लेख में।

इस अंक में कुछ अन्य लेख भी शामिल हैं-चित्रा सिंह का लेख भारतीय समाज में शिक्षा की परंपरागत और आधुनिक अवधारणा के संदर्भ में शिक्षक की भूमिका की समीक्षा करता है। विजय कुमार आर्य ने अपने लेख में वर्तमान शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की समीक्षा करते हुए यह समझाने का प्रयास किया है कि शिक्षकों के लिए किस प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाने चाहिए। कृष्णकान्त का लेख गिज्जूभाई के शैक्षिक चिंतन का विश्लेषण करता है। शांति कुमार लखेड़ा और अमित कुमार ने अपने लेख में महान सत्याग्रही विनोबा भावे के भूदान यज्ञ व उनके शैक्षिक चिंतन को उजागर किया है। स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में बदलाव की प्रक्रिया जारी है। आप कैसी स्कूली शिक्षा की कल्पना करते हैं, अपने लेखों के माध्यम से पाठकों तक पहुंचाकर चर्चा का अवसर दें।

अकादमिक संपादकीय समिति